UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

रागदारी संगीत में वर्ण की अवधारणा

डॉ. श्रद्धा चोपड़ा
प्राथमिक शिक्षिका (संगीत)
केन्द्रीय विद्यालय डिमापुर
नागालैंड
Email: sangeet.shraddha@gmail.com

सारांश

विश्व संगीत पटल पर भारतीय संगीत अपनी विलक्षण राग गायन परम्परा के लिये विशेष रूप से जाना जाता है। राग रंजित ध्वनियों का समूह है, जो विशेष विधि से संयोजित स्वर और वर्णों से बनता है। स्वरों की गतिशीलता से वर्ण बनते हैं और विशेष वर्णों से बनने वाली विविध भंगिमाओं से प्रत्येक राग का अपना स्वरूप व्यक्त होता है। आजकल वर्णों को मात्र स्वरों की गतिशीलता के रूप मे देखा जाता है। वर्णों के भेद या उसकी इकाई निर्धारित करने के लिये कोई आधार नहीं है। इस विषय में कोई प्रश्न भी उपस्थित नहीं किया जाता। संगीत शास्त्र के प्राचीन ग्रंथों में मिलने वाले संकेतों के आधार पर वर्णों के विभाजन का आधार पद को माना जा सकता है। गेय रचनाओं में इसी आधार पर चार प्रकार के वर्णों को समझने की चेष्टा की जा सकती है। इस प्रकार राग की क्रियात्मक इकाई वर्ण के स्वरूप और इसके विभिन्न भेदों के विषय में उदाहरणपूर्वक तार्किक दृष्टि से विचार करना प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य है।

मुख्य बिन्दु - रागदारी संगीत, राग, वर्ण, गान क्रिया, संगीत रत्नाकर , बृहद्देशी, दत्तिलम्, नाट्यशास्त्र

रागदारी संगीत की विलक्षणता:

रागदारी संगीत भारतीय संगीत की मौलिक विशेषता है, जो प्राचीन काल से अविछिन्न रूप से बढ़ती हुई हम तक पहुँची है। देश-काल के परिवर्तन के फलस्वरूप इसमें कुछ अन्तर भी परिलक्षित होते हैं, परन्तु अपनी विशेषता एवं महत्ता के कारण रागदारी संगीत समूचे भारत वर्ष में निरन्तर रूप से लोकप्रिय रहा है। भारतीय रागदारी संगीत की यह विशेषता है कि इसमें कलाकार को राग के नियमों का पालन करते हुए भी अपनी प्रतिभा दिखाने का पर्याप्त अवसर मिलता है। इस प्रकार कलाकार राग को परम्परागत रूप से सीखते हैं, साथ ही साथ अपनी कलात्मक सृजनशीलता का उत्तम समन्वय करके रागदारी संगीत को जीवन्त रखने का प्रयास करते हैं।

राग शब्द का अर्थ एवं परिभाषा:

राग शब्द रंज धातु में घञ् प्रत्यय लगकर बना है, जिसका अर्थ होता है-रंगना। राग रंजक ध्वनियों से बनी एक विशेष रचना है, जिसके द्वारा स्वस्थ चित्त को रंगा जाता है, अर्थात् चित्त का रंजन होता है। राग के विषय में मतंग मुनि ने लिखा है-

'यौऽसो ध्वनि विशेषस्तु स्वरवर्णविभूषितः।

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

रंजको जनचित्तानां स च राग उदाहृतः ।।'[1]

राग विशेष प्रकार की ध्वनियों का समूह है, जो स्वर एवं वर्ण से विभूषित होता है। लगभग यही अभिप्राय मतंग के निम्नलिखित कथन से अभिव्यक्त होता है-

'स्वरवर्णविशेषेण ध्वनिभेदेन वा पुनः।
रज्यते येन सच्चित्तं स रागः सम्मतः सताम्।।'[2]

कहने का तात्पर्य यह है कि स्वर से बनने वाले प्रत्येक समूह को राग नहीं कहा जाता, स्वर से बनने वाले विशेष ध्वनि समूह को ही राग माना जाता है। यहाँ ध्वनि-विशेष से तात्पर्य यह है कि राग में स्वर प्रयोग के कुछ निश्चित नियम होते हैं; जैसे-अंश, न्यास, अल्पत्व, बहुत्व, तार, मन्द्र आदि। इन नियमों का पालन करते हुए जब कोई वर्ण-समूह रंजकता प्रकट करता है, तब वह राग कहलाता है। इस प्रकार तात्त्विक दृष्टि से राग की इकाई ध्वनि ही है, परन्तु रंजकता का अनिवार्य गुण लेते हुए यही ध्वनि स्वर का रूप धारण करती है। स्वरों से स्थायी आदि वर्णों और चलन सम्बन्धी नियमों का पालन करते हुए राग का निर्माण होता है। यहाँ हम रागदारी संगीत में वर्ण की अवधारणा पर प्रकाश डालने का प्रयास करेंगे।

वर्ण की परिभाषा एवं प्रकार:

वर्ण का सम्बन्ध गान क्रिया से है। गायन का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने पर हमें ज्ञात होता है, कि राग के स्वरों का गायन मुख्यतः तीन प्रकार से होता है-

कभी-कभी स्वरों की पुनरावृत्ति होती है - सासासा रेरेरे।

तारता की दृष्टि से कभी स्वरों का चढ़ता क्रम दिखाई देता है - सा रे ग प।

तारता की दृष्टि से कभी स्वरों का उतरता क्रम परिलक्षित होता है - ग रे सा ध़।

राग के स्वरों का गायन करते समय कभी-कभी उपरोक्त में से एकाधिक क्रियाएँ भी एक साथ दिखाई देती हैं- सासासा सारेसाध़ सारेगप गरेसासा, जिसे चौथा वर्ण मानकर संचारी वर्ण के नाम से सम्बोधित किया गया है। वर्ण के विषय में पण्डित शाङ्र्गदेव ने लिखा है -

'गानक्रियोच्यते वर्णः स चतुर्धा निरूपितः।
स्थाय्यारोह्यवरोही च संचारीत्यथ लक्षणम्।।'[3]

इस प्रकार गाने की क्रिया को ही रागदारी संगीत में वर्ण कहा गया है, जो कुल मिलाकर चार प्रकार की होती है, ये चार प्रकार स्थायी, आरोही, अवरोही एवं संचारी है। जिस प्रकार भाषा की सबसे छोटी इकाई वर्ण (अक्षर) है, उसी प्रकार भारतीय रागदारी संगीत में वर्ण को क्रियात्मक संगीत की इकाई माना जा सकता है, क्योंकि इन चारों ही वर्णों से राग की क्रिया संचालित होती रहती है एवं इन चारों ही वर्णों के माध्यम से राग के स्वर क्षेत्र के अन्दर गान प्रक्रिया चलती रहती है।

[1] बृहद्देशी, भाग-2, श्री मतंग मुनि, पृष्ठ-77, संपादिका-प्रेमलता शर्मा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली
[2] बृहद्देशी, भाग-2, श्री मतंग मुनि, पृष्ठ-77, संपादिका-प्रेमलता शर्मा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली
[3] संगीत रत्नाकर भाग-1, पं. शाङ्र्गदेव, अनु.-सुभद्रा चौधरी, पृष्ठ-148, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

रागदारी संगीत मेलोडी प्रधान होने से हम वर्णों के समूह से रागों को विभिन्न प्रकार से अभिव्यक्त करते हैं। वर्णों के माध्यम से ही अगले स्तर पर बंदिशों तथा आलाप जैसे उपज के विभिन्न रूपों का विस्तार किया जाता है, साथ ही राग में प्रयुक्त होने वाले अलंकारों का निर्माण भी इन्हीं वर्णों के माध्यम से होता है। यहाँ हम पहले संगीत की रचनाओं में उक्त चारों ही वर्णों की स्थिति को समझने का प्रयास करेंगे।

ज्ञेय रचनाओं में वर्ण प्रत्यक्ष:

किसी भी रचना में सम्मिलित रूप से स्थायी, आरोही एवं अवरोही इन तीनों क्रियाओं का प्रयोग होता है। ऐसी स्थिति में प्रश्न यह उठता है कि किसी रचना में केवल संचारी वर्ण का प्रयोग माना जाए या तीनों वर्णों का अलग-अलग प्रयोग माना जाए ? यदि तीन वर्ण अलग-अलग माने जाए तो स्वर-समूहों का विच्छेद किस आधार पर किया जाए, यह भी स्पष्ट नहीं हैं। आधुनिक काल की अधिकांश पुस्तकों[4] में इस विषय में कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता कि वर्णों का निर्धारण करने के लिए स्वर-समूहों का विभाजन कहाँ से अथवा किस आधार पर किया जाये। किसी भी रचना की स्वरलिपि में भिन्न-भिन्न स्वरों पर न्यास करने से हमें प्रत्येक बार भिन्न-भिन्न प्रकार के वर्ण दिखलाई देंगे। यहाँ उदाहरणार्थ राग शुद्ध कल्याण की बंदिश की एक पंक्ति की स्वरलिपि दी जा रही है, जैसे-

सासा ध़ ध़ सासा रेसा सारेग प गरे सारे सा

वर्ण	स्थायी	स्थायी	स्थायी	अवरोही	आरोही	अवरोही	संचारी
स्वर	सा सा	ध़ ध़	सा सा	रे सा	सा रे ग	प ग रे	सा रे सा

वर्ण	संचारी	संचारी	संचारी	आरोही	अवरोही	अवरोही
स्वर	सा सा ध़	ध़ सासा	रे सा सा	रे ग प	ग रेसा	रे सा

वर्ण	स्थायी	स्थायी	स्थायी	अवरोही	आरोही	संचारी
स्वर	सा सा	ध़ ध़	सा सा	रे सा	सा रे ग प	ग रे सा रे सा

वर्ण	स्थायी	स्थायी	स्थायी	संचारी	आरोही	अवरोही	अवरोही	अवरोही

[4] क्रमिक पुस्तक मालिका, भाग-2, पं. विष्णु नारायण भातखंडे, पेज-13, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद
संगीतांजली, भाग-1, ओंकारनाथ ठाकुर, पेज-6, पिल्ग्रिम्स पब्लिशिंग वाराणसी, दिल्ली
संगीत विशारद, वसंत, पेज-176, संगीत कार्यालय हाथरस, उत्तरप्रदेश
राग परिचय, भाग-1, हरिश्चंद्र श्रीवास्तव, पेज-120, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद

स्वर	सा सा	ध़ ध़	सा सा	रे सा सा	रे ग	प ग	रे सा	रे सा

इसी प्रकार भिन्न-भिन्न स्वरों पर न्यास करने से भिन्न-भिन्न प्रकार के वर्ण और भी बनाए जा सकते हैं। अभिप्राय यह है कि उक्त पंक्ति को देखकर निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि पूरी पंक्ति को एक इकाई मानकर उसे संचारी वर्ण माना जाए अथवा उसमें स्थायी आदि एकाधिक वर्ण माने जाए। एकाधिक वर्ण मानने पर भी यह स्पष्ट नहीं है कि इसमें वास्तव में कितने और कौन-कौन से वर्ण प्रयुक्त हैं ? यह तो इस बात पर निर्भर करेगा कि हम उक्त पंक्ति में कितने स्वरों को एक समूह या वर्ण में सम्मिलित करेंगे।

उक्त शंका के समाधन हेतु संगीत शास्त्र के प्राचीन ग्रंथों[5] में कुछ ऐसे संकेत मिलते हैं जिनके आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि वर्णों का निर्धारण गेय रचना में प्रयुक्त होने वाले पदों के आधार पर किया जाना चाहिये। वर्ण का निरूपण करते हुए स्थायी वर्ण के संदर्भ में दत्तिल कहते हैं कि जब गीति के किसी एक पद में स्वर की पुनरावृत्ति होती है, तब उसे स्थायी वर्ण कहा जाता है, आगे वे कहते हैं कि संचारी, अवरोही एवं आरोही वर्णों को भी इसी प्रकार समझना चाहिये। उपरोक्त कथन से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि एक ही पद में प्रयुक्त होने वाले स्वरों से स्थायी वर्ण के साथ-साथ संचारी, आरोही एवं अवरोही वर्णों का भी निर्धारण किया जाएगा।

नाट्यशास्त्र में भरत मुनि ने 29वें अध्याय में वर्ण का निरूपण किया है। 29वें अध्याय के 18वें श्लोक पर अभिनव गुप्त की जो टीका प्राप्त होती है, उससे भी यह स्पष्ट होता है कि वर्ण का निर्धारण पद के आधार पर किया जाता है। नाट्यशास्त्र के मूल पाठ में पद का उल्लेख नहीं है। संपादक ने अभिनव भारती के आधार पर ही नाट्यशास्त्र में इस प्रकार का पाठ सुझाया है, तदनुसार भरत मुनि कहते हैं कि -

एवं (पदं) लक्षणसंयुक्तं यदा वर्णोऽनुकर्षति।
तदा वर्णस्यनिष्पत्तिर्ज्ञेया स्वरसमुद्भवा।।[6]

मतंग मुनि ने भी स्थायी वर्ण के प्रसंग में पद का उल्लेख किया है वे कहते है कि पद में स्वरों की पुनरावृत्ति होने पर उसे स्थायी वर्ण माना जायेगा। अभिप्राय यह है कि वर्ण हेतु स्वर समूहों का विच्छेद प्रयुक्त होने वाले पद के आधार पर किया जाना चाहिये। किसी एक पद में प्रयुक्त होने वाले स्वरों से ही यह तय होता है कि उसमें कौन सा वर्ण प्रयुक्त हुआ है, अर्थात् रचना के एक पद में प्रयुक्त होने वाले स्वरों के आधार पर वर्ण का निर्धारण किया जाना चाहिये, तदनुसार राग शुद्ध कल्याण की उपर्युक्त पंक्ति को पदों के साथ लिखा जाये तो वर्णों की स्थिति निम्नानुसार स्पष्ट होगी-

वर्ण	स्थायी	स्थायी	स्थायी	अवरोही	आरोही	अवरोही	संचारी
स्वर	सा सा	ध़ ध़	सा सा	रे सा	सा रे ग	प ग रे	सारे सा

[5]ननु वर्णशब्देन किमुच्यते? वर्णशब्देन गानमभिधीयते। यत्र समाः स्वरा अनुपहतरूपास्तिष्ठन्ति तेभ्यो यद्गीतं वर्णाभिव्यक्तिकृद् यत्र पदे स वर्णः स्थायीत्युच्यते।
बृहद्देशी, भाग-1, मतंग मुनि, पृष्ठ-84, संपादिका-प्रेमलता शर्मा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली

ekasvarā pade gītih sthāyivarno' bhidhīyate
A STUDY OF DATTILAM, MUKUND LATH, PAGE-300, 98B, IMPEX INDIA NEW DELHI, JAN 1978

[6] भरत मुनि, नाट्यशास्त्र, अध्याय-29, श्लोक-18, संपादक-रविशंकर नागर, परिमल पब्लिकेशन्स दिल्ली, प्रथम संस्करण

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

पद	ए क	घ री	प ल	जि या	मा न त	ना ऽ हिं	मोऽ रा

इस प्रकार से उक्त पंक्ति में क्रमशः स्थायी, स्थायी, स्थायी, अवरोही, आरोही, अवरोही एवं संचारी ये सात वर्ण प्राप्त होते हैं। निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि गाने की जिस क्रिया को वर्ण कहा गया है, उसका निर्धारण गायन में प्रयुक्त होने वाले पदों के आधार पर किया जाना चाहिये। वादन में गीत का अनुकरण होता है। अतः वादन में भी निहित पदों के आधार पर वर्णों का निर्धारण किया जा सकता है। पद के अभाव में वर्ण का निर्धारण करना सम्भव नहीं है।

इस विषय में एक सम्भावना और व्यक्त की जा सकती है। प्राचीन परम्परा में न्यास, अपन्यास, सन्यास और विन्यास को ठहराव के स्वर माना गया है। न्यास तो पूरे गीत का समापक होता है किन्तु अपन्यास, सन्यास और विन्यास गीत खण्ड या गीत खण्ड के किसी भाग के समापक होते हैं। न्यास पूरे गीत का समापक होने के साथ-साथ किसी गीत खण्ड के भाग रूप का समापक भी होता है। अभिप्राय यह है कि राग की प्रकृति के अनुसार किन्ही विशेष स्वरों पर अन्य स्वरों की अपेक्षा ठहराव ज्यादा होता है। अतः ऐसे ठहराव वाले स्वरों को किसी स्वर समूह का अन्तिम स्वर मानते हुए वर्ण का निर्धारण किया जा सकता है। ऐसा स्वीकार करने पर यह सिद्धान्त राग के गायन और वादन दोनों ही में समान रूप से लागू किया जा सकता है।

निष्कर्ष एवं शोध परक विचारणीय बिन्दु:

उक्त विवेचन से जो बातें उजागर होती हैं उनके आधार पर संक्षेप में कहा जा सकता है कि तात्त्विक दृष्टि से राग की इकाई रंजक ध्वनि या स्वर है। प्रयोग की दृष्टि से वर्णों को राग की इकाई माना जा सकता है। गाने की जिस क्रिया को वर्ण कहा गया है, उसका निर्धारण गायन में प्रयुक्त होने वाले पदों के आधार पर किया जाना चाहिये किन्तु अब तक किये गये अध्ययन के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि वर्ण की उक्त धारणा सर्वथा निर्विवाद और शंका रहित है।

प्राचीन ग्रंथों में वर्ण के विषय में जो उल्लेख प्राप्त होते हैं उनके विषय में कुछ शंकाएं भी उपस्थित होती है इन शंकाओं का उल्लेख करना भी शोध की दृष्टि से समीचीन होगा। स्मरणीय है कि दत्तिल, मतंग और अभिनव गुप्त ने तो वर्ण के विषय में पद का उल्लेख किया है किन्तु इन्हीं की परंपरा का अनुसरण करते हुए भी शाङ्र्गदेव ने इस विषय में पद का उल्लेख क्यों नहीं किया? शाङ्र्गदेव के परवर्ती ग्रंथकार भी इस विषय मे मौन क्यों हैं ? प्राचीन ग्रंथों में ग्राम रागों का वर्णन करते समय प्रत्येक राग में प्रयुक्त होने वाले वर्ण का उल्लेख भी किया गया है। ग्रंथकार ने किसी ग्राम राग से किसी एक ही वर्ण का संबंध जोड़ा है इससे यह प्रश्न उपस्थित होता है कि किसी एक ही वर्ण के आधार पर राग गायन करना संभव कैसे है ? शाङ्र्गदेव ने 30 ग्राम रागों में से प्रत्येक के साथ आरोही अवरोही अथवा संचारी वर्ण का संबंध जोड़ा है[7] किन्तु स्थायी वर्ण का उल्लेख उन्होंने किसी भी राग में क्यों नहीं किया ? अतः यहाँ प्रश्न यह भी उपस्थित होता है कि जब स्थायी वर्ण का प्रयोग किसी भी राग में नहीं होता तो शास्त्र में स्थायी वर्ण का वर्णन करने का औचित्य क्या है ? अध्ययन करने पर ऐसी और भी शंकाएँ और उपस्थित हो सकती हैं। अतः उक्त शंकाओं के समाधान हेतु वर्ण के विषय में और अधिक तथ्यों का अध्ययन कर किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की आवश्यकता है।

[7] संगीत रत्नाकर, 2/2/21-192, पं. शाङ्र्गदेव, अनु.-सुभद्रा चौधरी, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, प्रथम संस्करण

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

संदर्भ ग्रंथ सूची:

- ठाकुर ओंकारनाथ, संगीतांजली, भाग-1, पिल्ग्रिम्स पब्लिशिंग वाराणसी, दिल्ली, 2012
- भरत मुनि, नाट्यशास्त्र, भाग-4, संपादक-रविशंकर नागर, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1984
- भातखंडे विष्णु नारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग-2, संगीत सदन प्रकाशन इलाहाबाद, 2009
- मतंग मुनि, बृहद्देशी भाग-2 संपादिका-प्रेमलता शर्मा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1992
- Lath Mukund, A Study Of Dattilam, Page-300, 98b, Impex India New Delhi, Jan 1978
- वसंत, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय हाथरस उत्तरप्रदेश, 2007
- शारंगदेव, संगीत रत्नाकर, अनुवादक सुभद्रा चौधरी, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2000
- श्रीवास्तव हरिश्चंद्र, राग परिचय भाग-1, संगीत सदन प्रकाशन इलाहाबाद, 2016